भारतीय अध्यात्म में साहित्य और संगीत

डॉ. सोनदीप मोंगा
सहायक आचार्य, सरकारी कालेज, रूपनगर, पंजाब

ललित कलाओं म साहित्य और संगीत का स्थान सर्वश्रेष्ट माना जाता रहा है। साहित्य समाज का दर्पण है तो संगीत समाजिक मनोवृति का प्रतिबिम्ब है। साहित्य और संगीत दोनो में ही भाव अभिव्यक्ति की क्षमता है भारतीय संस्कृति की आत्मा अध्यात्मिक स्वर एवं धार्मिक अभिव्यंजना से अनुप्राणित रही है। इसलिए ही भारत में संगीत को मंदिरों में अधिक प्रयोग किया जाता रहा है। मंदिरों में गूंजने वाले इस संगीत को परमात्मा की भाषा भी कहा जाता है जिसे सीख कर ही आत्मा परमात्मा तक अपने भाव व्यक्त कर सकती है। भारतीय संस्कृति का अध्यात्म केवल एक व्यक्ति की गवेषणा चेष्टा नहीं, वरन विश्व में व्याप्त सामूहिक समाष्टिगत आत्मा की खोज है। एक अव्यक्त असीम के अनुसंधान को विविध कलाओं के रूप में अपने आप को प्रकट किया। इस तरह आरम्भ काल से अध्यात्मिक साहित्य और संगीत का समन्वय स्थापित हो गया। वाकतत्व वेद का सर्व प्रमुख प्रतिपाद है। वहाँ यह एक देवता तथा शक्ति के रूप में है। इसे ब्राम्ही, भाषा, गीत, वाणी और सरस्वती इन पर्याय शब्दों से भी कहा गया है। अव्यक्त पुरूष (आत्मा) वाणी के अर्थात वाक शक्ति के द्वारा ही व्यक्त होता है। शक्ति तथा शक्तिमान (आत्मा तथा वाणी) इनका अविनाभाव सम्बन्ध रहता है। वैदिक वाक् ही वैदिक शब्द तत्व का परम श्रेष्ठ स्तर है, जो आगमधारा में परावाक् नाम से विख्यात हुआ है। वही प्रकट होने के क्रम में यश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी का रूप लेता हुआ लोक में अवतरित होता है।

वाणी का परा स्वरूप अव्यक्त तथा सूक्ष्म होता है। ओंकार को सब प्रकार की वाणी का मूल स्त्रोत कहा गया है। वैदिक आर्यों ने वाणी के महत्व को अनेक सूक्तों तथा ऋचाओं के द्वारा व्यक्त किया है। इसका प्रमाण इस बात से मिल जाता है कि ऋग्वेद की ऋचाओं का गेय स्वरूप सामवेद में निहित है। वेद मंत्र दृष्टाओं भरा अध्यात्मिक साहित्य संगीत के मधुर स्वरों में थिरक पड़ा। परम्परा के अनुसार सहित्य और संगीत का उद्गम समान तत्वों से हुआ हैं विस्तृत दृष्टि से देखें तो संगीत में साहित्य के तत्व मिलते हैं। साहित्य और संगीत दोनों का सम्बन्ध ही ध्वनि (नाद) से है। शब्द और स्वर का मूल एक है दोनों का लक्ष्य भाव का प्रकाशन है। यह भाव रसनुभूति से संम्बन्धित है फिर वो साहित्य हो या संगीत दोनों में नाद को प्राण माना है, विशेषकर अध्यात्मिक साहित्य की बात की जाए तो दूसरी तरफ संगीत कला में नाद अनुभूति रस ही है।

आधत्मिकता के संदर्भ में इसे भक्ति रस से जोड़ा जाता है। जैसे ही भक्त भगवान का जाप करता है, वह अपना ध्यान संसार से हटा के अन्तः करण में लगाता है। इस साधना–काल में उसे नाद की मधुर शक्ति परमात्मा के साथ इस प्रकार बाँध देती है कि वह स्वर्गिक आनंद का अनुभव करने लगता है। डॉ. श्रीमती महारानी शर्मा इस मनन प्रक्रिया में नाद को ही अमृत का स्रोत बयान कर रही हैं उनके अनुसार 'अध्यात्मिक रूप से देखें तो एक भक्त संगीत की मधुर ध्वनियों के माध्यम से ही अपने हृदय को सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावों को अपने भगवान को अर्पण करके तन्मयी स्थिति पर पहुँच जाता है और अपनी आत्मा को उस ईश्वर के साथ एकात्म करके ब्रह्मा के पूर्णानंद का अनुभव करने लगता है। फिर उसे संसार के दुःख सुख का ज्ञान नहीं होता चूँकि संगीत कला स्वतः विभिन्न नादों का संयोग–मात्र हैं अतः संगीत से उत्पन्न आनंद ही ईश्वर का दूसरा सगुण रूप है। यही कारण है कि आदि काल से हमारे ऋषि–मुनियों ने नाद की उपासना ईश्वर रूप में की है और 'ओम् नाद ब्राह्मणे' इति मानकर नाद को ब्रह्म का रूप माना है इसी नाद के ब्राह्मारूप अथवा प्रणव की साधना करते हुए वे आनंद–तत्व में अपने को लीन कर लेते थे। अपनी सभी सुख–दुःख की भावनाओं से परे होकर पारब्रह्म अथवा प्रणव की साधना करते हुए वे आनंद–तत्व में अपने को लीन कर लेते थे। अपनी सभी सुख–दुःख की भावनाओं से परे होकर पारब्रह्म परमात्मा के साथ एकात्म होते थे। अतएव जहाँ नाद है, वहीं अमृत का स्राव भी होता रहता है।[1] इस लिए उन ऋषि मुनियों ने संगीत को भगवद्ध गुणों का ज्ञान मान कर साहित्य रूप में जगत कल्याण के लिए प्रयोग किया। यह भी माना जाता रहा है कि आदिम संगीतज्ञ नटराज की ताल लय समन्वित ताण्डव से साहित्य व संगीत के तत्वों का एक साथ ही सूत्रपात हुआ। संगीत का आदिम राग, भैरव भगवान शिव के अघोर मुख से उत्पन्न हुआ और साहित्य की आदिम वर्ण मात्रा महादेव के पदचाप से उद्भव हुई। संगीत में गीत, वाद्य नृत्य इन तीनों का समावेश नाद के ही विस्तार है। इस के साथ साहित्य मे भी नाद का विस्तार है। इसका विवरण प्राचीन साहित्य ग्रन्थों में पाया जाता है। व्यवहारिक तौर पर संगीत आध्यात्मिक साधना के सामान है और इस साधना को सार्थक सचल करने के लिए शास्त्र का प्रयोजन है।

भारतीय अध्यात्म संस्कृति के प्रतिनिधि वेद रचेता एवं साहित्यकार संगीत के प्रकाण्ड विद्वान रहे हैं, क्यों कि भारतीय अध्यात्म की यह धार्मिक अभिधारणा आर मान्यता रही है, कि संगीत माध्यम के द्वारा आत्मा सुर में आती है और मानव चरित्र निखरता है। वाणी के अराधना माध्यम, में संगीत का प्रयोग ही किया जाता रहा है। हिन्दू धर्म के चार वेदों में सामवेद संगीत पर आधारित है

रामायण और महाभारत जैसे अध्यात्मक ग्रन्थ भी गायन परम्परा का सृजन करते प्रचलन में आए और लोकप्रिय हुए। भगवान बुद्ध खुद एक उत्तम संगीतकार थे। बुद्ध और जैन धर्म दोनों ने अपने विचारों का प्रचार करने के लिए संगीत को माध्यम बनाया। बुद्ध धर्म के साहित्य में गायन, वादन, नृत्य और संगीतकारों के बारे मे लिखा हुआ मिलता है।[2] बुद्ध धर्म में वैतालिक जिन्न धुनों पर बेर गाथाओं का गायन करते थे वह विभिन्न लैय प्रकारों पर आधारित थी और इनमें भक्ति रस की अभिव्यक्ति होती थी। बुद्ध कवि अशवयोग के बारे में प्रसिद्ध बात थी कि वह अपने साथ संगीत मंडली रखता था और गा कर बोधी सिद्धांतों का प्रचार करता था।[3] जैन धर्म मे वंदना, पूजा–पाठ के लिए कई रचनाएं जैसे धरूपद, टेक, चारकड़ियाँ, लावनी, दोहा, शेयर–गजल, कविता, सवैया, चौपाई, सुन्दरी, भूजंग प्रयात छन्द आदि गायन प्रचार विधियाँ प्रचलन में थी।[4] नाथ वाणी ने भी संगीत और रागमय स्वरूप को अध्यात्मिकता के संदर्भ मे स्वीकर किया।

वैशणव मत में भक्ति संगीत के विकास में बारह वैशवण अलवरों का विशेष योगदान है। इस परम्परा के महान प्रचारक रामनुजचार्य थे। बारहवीं सदी मे जयदेव रचित 'गीत गोबिन्द' इस परम्परा की महान रचना है यह ग्रन्थ अध्यात्मिक काव्य और संगीतक पक्ष दोनों रूपों में महत्वपूर्ण है। इस तरह शैव मत के भक्त नयनारों की रचनाएं 'त्रृसुराए' नामक ग्रन्थ मे अंकित है, जो रागात्मक है। चैतन्य संम्प्रदाए मे भी भजन विशेष संगीत विधि 'संकीर्तन' प्रयोग की जाती थी।[5]

भारत में सूफी गायका ने अपने मत के प्रचार के लिए 'सुफीयाना कलाम' को साहित्यक रूप में रचा। इन्होंने परमात्मा को अपना 'प्रिय मानते हुए प्रभू प्रेम काव्य और संगीत रूप में अभिव्यक्ति किया। इन्होंने निबद्व गायन शैली काफी और कवाली का आगाज किया। बल्लभ सम्प्रदाय के कवियों ने कीर्तन शैलो में नाद गुंजार का प्रयोग किया यह कृष्ण लीलाओं पर आधारित भक्ति गीत थे, जो भजन कीर्तन सामूहिक और व्यक्तिगत दोनें रूपों में प्रचार में थे।[6] इस तरह प्राचीन काल से मध्य काल तक महामानवों ने जो कुछ आत्म ज्ञान और मोक्ष प्राप्ति के लिए रचा उसे संगीत रूप में जब अपनाया गया तो वह 'मार्ग संगीत' कहलाया।[7]

इससे आगे की परम्परा में इस्लाम धर्म में खुदा की इबादत के लिए मस्जिद में अजान के स्वरों को रूहानीयत के लिए प्रयोग किया जाता है। इसाई धर्म में गिरिजाघरों में समुहगान के तौर पर धर्मिक प्रार्थना का प्रचलन है। सिक्ख धर्म

का साहित्य खजाना, श्री गुरू ग्रन्थ साहिब की रचना रागबद्ध तौर पर उपलब्ध है, जिस का विशेष राग गायन परम्परा के तौर पर निर्वाह किया जाता है।

मनुष्य अपनी जीवन डगर पर जब भी उलझा तो उसने मनोशान्ति के लिए धर्म की टेक ली और उससे जुड़े संगीत से ही उसको मानसिक आनन्द की अनुभूति हुई। चमन लाल जी मानव मन के गुंजते हुए संगीत को रूहानी प्रेम के शून्य भाव के जैसे वर्णन करते हुए लिखते हैः

'There comes a time in life of man, When the body and the brain and the mind want to feel the stillness of the Universal spirit then the best thing is to do nothing that takes away all misfortune, that cures all diseases that soothes all sorrow that alone make man whole again. As in the silence that follows then the singers voice is still we gather all the meaning of the song so in the wonderful silence of his heart that Brahman loving man sees all as music, as a sublime symphony that fills his whole being with Joy.[8]

इस तरह की मानसिक शान्ति को श्री गुरू ग्रन्थ साहिब अधारित गुरबाणी संगीत में 'अनहद नाद' के साथ ब्यान किया गया है जो मानसिक आनन्द का परम स्रोत हैः

कहै नानक तह सुख होआ, तित घर अनहद वाजे।।[9]

वास्तविक देश और काल को भूल कर जब हम अनिर्वचनीय आनन्द में खो जाते हैं इसी आनन्द को 'रस ' कहा जाता है। हमारी यह अवस्था ही रसानुभ्ति की अवस्था है। ग्रन्थ के पठन से जो आनन्द प्राप्त हाता है, वही आनन्द संगीत के श्रवण से प्राप्त होता है। 'भारतीय संगीत के दो अंग है– एक ब्राह्म अंग जो नेत्रों तथा श्रवणेन्द्रिय के द्वारा आत्मा का ऐसा भोजन है, जिसके अभाव मे मानवंचित गुण फूल फल नहीं सकते, जिसे मानवता के विकास की उत्कृष्ट इच्छा है, उसे कोई भी महात्मा अथवा योगी चित्त की स्थिरता के लिए संगीत का आश्रय लेने का ही आदेश देता है।[10] तभी तो माना जाता है कि सिक्खों के धार्मिक ग्रन्थ, श्री गुरू ग्रंन्थ साहिब अधारित गुरबाणी कीर्तन सुनने से मनुष्य शांत चित्त और रोगमुक्त हो जाता है। गुरबाणी के अर्न्तगत शब्द को शब्दात्मिक (अर्थ धारणी) और नादात्मिक (स्वरधारणी) दोनों रूपों मे स्वीकार किया गया है। यहाँ शब्द मूल रूप मे अध्यात्मिक–सत्य के रहस्य उजागर करता है तो संगीत मानव मन को ध्यान केन्द्रित करने में सहाय होता है। इस प्रकार गुरबाणी के शब्द को दोनों अर्थो में पयोग कर 'परमात्मा प्राप्ति' और

सुरत और शब्द ध्वनि द्वारा 'अनहद नाद' को जगाने की और संकेत करता है जैसे श्री गुरू ग्रन्थ साहिब में संकलित हैः

खट्ट मट्ट देही मन वैरागी
सुरते शब्द धुन अन्तर जागी
वाजै अनहद मेरा मन लीणा
गुर बचनी सच्च नाम पतीणा।[11]

नाद रूपी शब्द का सीधा सम्बन्ध प्रभु से है। इस में अध्यात्मिकता के अनुभव को अगम, अगोचर, अयोनि, अकाल पुरख के जस गायन के लिए श्री गुरू ग्रन्थ साहिब के रचैता गुरू साहिबानों ने शब्द की विभिन्न शक्तियों को विभिन्न अर्थ देते हुए संगीतमय बनाया है। गुरबाणी का यह विधान वाणी सन्देश को अभिव्यक्ति करता है। इसकी प्रस्तुति प्रक्रिया को 'गुरमत संगीत' के तौर पर पहचाना गया।

राग भारतीय संगीत की बुनियाद है। यह एक निश्चित स्वर समूह है जो स्वर सप्तक में चलता हुआ रंजकता उत्पन्न कर भावों की पूर्ण अभिव्यक्ति सृजन करता है स्वर से लगाव हृदय को छ लेने जैसा होता है और अलौकिक आनन्द की प्राप्ति देता है। असल में राग का नाता प्रभू प्रेम से होता है। गुरबाणी ने राग का उद्देश्य विभिन्न रसों के द्वारा 'नाम रस' तक पहुचना है राग के स्वर तो पहले से ही कायनात में फैले हुए हैं, इस सात स्वरों के अलग–अलग मेल बना कर इनमें से रस और भाव प्राप्त होते हैं। यह सामर्थ केवल मनुष्य के पास ही है कि वह कल–कल करती नदियों , पेड़ों के पत्तों की खड़–खड़ और परिंदों के चहकने से आगे शब्द सृजन कर सकता है और अपने अन्तरमन की गुंज को इसके माध्यम के तौर पर अभिव्यक्त कर सकता है। यही अक्षर परमात्मा स्वरूप वाणी में संगठित और संगीतात्मिक पद्धति के अनुसार ढल जाते हैं और भक्ति भावना सहित शास्त्र रूप धारण कर लेते है। श्री गुरू ग्रन्थ को इस संदर्भ में देखते हुए प्रीतम सिंह गिल्ल लिखते हैंः

These letters and words God's praises are sung, meditation is done and Moksha is realized The duties of man are described through these words and man is made to perform these and lead a good life.[12]

यह प्राणतत्व नाद संगीत का मूलधाार है, सृष्टि को स्पन्दन प्रदान करता है। यह स्पन्दन व्यर्थ सा हो जाएगा यदि वह मुखरित न हो सके। उसे मुखरित करने का, जीवन्त माधुर्य प्रदान करने का, श्रेय साहित्य को जाता है। भातरीय

संस्कृति में शब्द और संगीत दीर्घ परम्परा रही है वर्तमान में भी इसको अधिक प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

संदर्भ

1. डॉ. श्रीमति महारानी शर्मा, नाद की आध्यत्मिकता, श्रीवास्तव प्रो. हरिश्चन्द (सम्पा) संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद, 2006, पृष्ठ 182
2. निखिल घोष, मदन लाल व्यास (सम्पा.), राग ताल के मूल तत्व और अभिनव स्वर लिपि पद्धति, विल्लेपोहले संगीत महाभारती, बंबई, पृष्ठ11
3. प्यारा सिंह पदम, श्री गुरू ग्रन्थ कोष, पृष्ठ 226
4. डो.एम. नरूला, संगीत समीक्षा, पृष्ठ 256
5. Swami Shivananda, Bhakti and Sankirtan. The Divine life society U.P. 1984, P.-89.
6. विमलाकांत राय, भारतीय संगीत कोष, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली 1975, पृष्ठ–73
7. श्री पदबन्धोपाध्याय, संगीत भाष्य, बी आर पब्लिशिग कारपोरेशन दिल्ली 1985, पृष्ठ– 268
8. Chaman Lal (Ed.), Mysteries of Life and Death, Fort Lavdable (Florida) USA. P-18.
9. आदि ग्रंथ, पृष्ठ–1041
10. डॉ. पुष्प नारायण (सम्पा.), भैरवी (संगीत शोध पत्रिका), मिथिला विश्वविद्यालय दरभंगा, बिहार, 2015, पृष्ठ–79
11. आदि ग्रंथ, पृष्ठ 903–4
12. Pritam Singh Gill, Concept of Sikhism, Page12.